भूमिका

'पत्रकारिता' जनसंपर्क का सशक्त माध्यम है। जिस प्रकार साहित्य को समाज का प्रतिबिंब माना गया है, उसी प्रकार पत्र-पत्रिकाएँ भी सीधे समाज से जुड़ी होती हैं या हम यह कहें कि इसका भी सीधा संबंध जीवन-मूल्यों से ही होता है। जिन जीवन-मूल्यों की स्थापना साहित्यकार, साहित्य में करता है उन्हें पत्रकारिता व्यावहारिक आयाम प्रदान करती है।

हिंदी पत्रकारिता के इतिहास में यदि स्वातंत्र्योत्तर युगीन पत्रिकाओं को देखा जाए तो उसमें 'कल्पना' का विशिष्ट योगदान रहा है। इस दौर में जितनी भी साहित्यिक पत्रिकाएँ (धर्मयुग, सारिका, आलोचना, माध्यम आदि) प्रकाशित हो रही थीं, उनसे 'कल्पना' कई मायने में भिन्न है। इसका आरंभिक विकास साहित्य के साथ-साथ कलात्मक पत्रिका के रूप में हुआ है। भाषा एवं साहित्य के विकास में 'कल्पना' न सिर्फ हिंदी पत्रकारिता के इतिहास में अविस्मरणीय है बल्कि पूरे हिंदी साहित्य के क्षेत्र में एक श्रेष्ठ पत्रिका के रूप में जानी जाती है। राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार एवं उत्थान के लिए उस दौर में भारत में जो प्रशंसनीय प्रयत्न हो रहे थे इसमें 'कल्पना' ने अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस पत्रिका की यह खास विशेषता रही है कि इसने रचना-चयन में रचनाकारों को महत्त्व न देकर सिर्फ रचना की उत्कृष्टता को महत्त्व दिया है। यह अपने दौर की एक ऐसी संतुलित पत्रिका थी जिसने एक साथ साहित्य की लगभग सभी विधाओं (निबंध, कविता, कहानी, नाटक, एकांकी, उपन्यास आदि) को प्रमुखता से जगह दी है।

चूँकि प्रत्येक युग के साहित्य पर तत्कालीन राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है इसलिए उस युग के साहित्य के अध्ययन के लिए उन परिस्थितियों का समुचित ज्ञान होना भी जरूरी है, इस दृष्टि से 'कल्पना' पत्रिका पूरी तरह सजग दिखती है। शुरुआती दिनों में यह पत्रिका द्वैमासिक थी लेकिन पाठकों की माँग एवं दबाव को देखते हुए तीसरे वर्ष से इसका प्रकाशन मासिक पत्रिका के रूप में होने लगा। यदि गौर करें तो 'सरस्वती' के बाद 'कल्पना' अकेली ऐसी

पत्रिका है जिसने बहुत ही कम समय में न सिर्फ साहित्य जगत में बल्कि हिंदी पत्रकारिता के इतिहास में भी अपनी मजबूत पैठ बनाई है। इस पत्रिका के पीछे प्रकाशक एवं संपादकों का एकमात्र ध्येय हिंदी भाषा के स्तर को ऊँचा रखना ही रहा है, इसका सफल निर्वहन 'कल्पना' में आद्यांत दिखता है। इस दौर का कोई ऐसा रचनाकार (या महत्त्वपूर्ण रचना) नहीं है जो 'कल्पना' से अछूता रहा हो। गैर हिंदी भाषी क्षेत्र (हैदराबाद) से निकलने वाली 'कल्पना' एक ऐसी साहित्यिक-सांस्कृतिक पत्रिका थी जिसने उत्तर और दक्षिण की भाषाओं, साहित्यों एवं संस्कृतियों को आपस में समन्वित करने का प्रयास किया है। शायद यही कारण है कि इसने गैर हिंदी भाषी रचनाकारों को भी उतना ही महत्त्व दिया जितना कि हिंदी भाषी रचनाकारों को। कुल मिलाकर देखें तो 'कल्पना' का साहित्य के विकास में बहुत ही महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इन सारी विशेषताओं को देखकर मुझे लगा कि इस विषय पर शोध-कार्य करना न सिर्फ मेरे लिए बल्कि पूरे साहित्य जगत के लिए काफी उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है इसलिए मैंने इसे अपने शोध का विषय बनाया।

विषय की गंभीरता एवं समयावधि कम होने के कारण मैंने पत्रिकाओं की उपलब्धता के आधार पर 'कल्पना' के लगभग 10 वर्ष की यात्रा (अगस्त 1949 से 1959 तक) को ही अपने शोध के अंतर्गत लिया है। हालाँकि इससे पहले 'कल्पना' से संबंधित विवेकी राय एवं शशिप्रकाश चौधरी ने कुछ कार्य किया है। एक प्रकार से कहें तो इनका काम सूचनात्मक ही रहा है और उसमें कई पक्ष अछूते भी रह गए हैं। यह शोध कार्य इनसे भिन्न इस मायने में भी है कि इसमें साहित्य की विविध विधाओं के विकास एवं उसमें अन्य पक्षों को लेकर 'कल्पना' की क्या भूमिका रही है, इसकी पड़ताल करते हुए उसका विवेचनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है या फिर उन पक्षों को उठाने की कोशिश की गई है जो अब तक अछूते रह गए हैं।

इस शोध में मुख्य रूप से विवेचनात्मक, विश्लेषणात्मक,आलोचनात्मक एवं ऐतिहासिक शोध-पद्धतियों का प्रयोग किया गया है।

इस लघु शोध-प्रबंध को 4 अध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम अध्याय में हिंदी पत्रकारिता के संक्षिप्त इतिहास का विवरण देते हुए 'कल्पना' पत्रिका के प्रारंभ और

विकास पर विस्तार से चर्चा की गई है। भाषाई सवालों को लेकर 'कल्पना' की क्या भूमिका रही है एवं इसे अपने उद्देश्यों में कहाँ तक सफलता मिल पाई है, इसकी भी चर्चा इसी अध्याय में हुई है।

दूसरे अध्याय में मैंने निबंध के विकास एवं उसकी विविधता पर विस्तार से चर्चा की है। इसमें कला- संस्कृति, लोक साहित्य एवं लोक संस्कृति के साथ-साथ उस दौर के समकालीन सृजनशीलता एवं अन्य निबंधों को प्रमुख रूप से दिखाया गया है। वास्तव में निबंध, साहित्य को कितने रूपों में प्रस्तुत करता है और उसके लेखन के कितने आयाम हो सकते हैं, इस पर भी इस अध्याय में चर्चा की गई है।

तीसरे अध्याय में मैंने हिंदी आलोचना के विकास में 'कल्पना' के प्रदेय की चर्चा की है। इसमें सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक दोनों तरह की आलोचनाओं की अलग-अलग सूचना देते हुए उसका विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। इस पत्रिका के संदर्भ में यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि आलोचना एक विधा के रूप में अभी भी अपनी विकासशील अवस्था में थी। इस पत्रिका ने हिंदी आलोचना को एक ठोस आधार प्रदान किया। इस अध्याय में इसके सभी उपादानों को देखने परखने की कोशिश हुई है।

कथा साहित्य, कविता, नाटक, एकांकी एवं अन्य विधाओं के विकास में 'कल्पना' का क्या योगदान रहा है, इसकी चर्चा मैंने चौथे अध्याय में की है।

अंत में विषय मूल्यांकन के तौर पर उपसंहार प्रस्तुत करते हुए परिशिष्ट में विषय से संबंधित दो विद्वानों (डॉ.नामवर सिंह एवं 'कल्पना' पत्रिका के कला संपादक जगदीश मित्तल) के साक्षात्कार को शामिल किया गया है।

इस लघु-शोध-प्रबंध के पूरा होने में कई लोगों का विशेष योगदान रहा है। मैं अपने शोध निर्देशक डॉ. रामानुज अस्थाना के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने मुझे विषय-चयन से लेकर लघु-शोध-प्रबंध पूर्ण होने तक अपने ढंग से कार्य करने की पूर्ण स्वतंत्रता दी। उनके कुशल निर्देशन एवं लोकतांत्रिक व्यवहार से मुझे निर्द्वंद्व दृष्टि एवं शोध-कार्य पूर्ण होने में काफी मदद मिली है। मैं साहित्य विभाग के अध्यक्ष प्रो. कृष्ण कुमार सिंह के प्रति आभारी हूँ जिन्होंने मेरे लघु-शोध-प्रबंध में आने वाली समस्याओं को सुलझाते हुए विषय-चयन एवं उचित मार्गदर्शन तथा सहयोग किया। मैं साहित्य विभाग के शिक्षक प्रो. सूरज पालीवाल, प्रो. रामवीर सिहं, डॉ. प्रीति सागर, डॉ. अशोक नाथ त्रिपाठी एवं अन्य

सभी के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिनसे समय-समय पर प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सहयोग मिला।

प्रो. नामवर सिंह एवं 'कल्पना' पत्रिका के कला-संपादक जगदीश मित्तल के प्रति बहुत-बहुत आभार...जिन्होंने मेरे एक ही अनुरोध पर बड़ी सहजता के साथ विषय से संबंधित अपने साक्षात्कार दिए। स्वामी सहजानंद संग्रहालय के सदस्यों के प्रति भी आभार, जिन्होंने मेरे शोध-कार्य के सामग्री संकलन में काफी सहयोग प्रदान किया। अंत में अपने अग्रज एवं मित्रों का भी आभारी हूँ जिन्होंने अपने बहुमूल्य समय के साथ-साथ इस लघु शोध-प्रबंध को पूरा करवाने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसके अतिरिक्त अन्य कई और नाम भी जाने-अनजाने में छूट जा रहे हैं, उनके प्रति भी बहुत आभार...

(प्रदीप त्रिपाठी)